।। ओ३म्।।

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

साप्ताहिक

आर्य सन्देश

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा का मुखपत्र

न भोजा मम्रुर्न न्यर्थमीयुः।।

ऋ. 10/107/8

दूसरों को भोजन कराने वाले और रक्षा करने वाले मृत्यु और नीच गति को प्राप्त नहीं होते हैं।

वर्ष 36, अंक 7 एक प्रति : 5 रुपये

सोमवार 24 दिसम्बर, 2012 से 30 दिसम्बर, 2012

विक्रमी सम्वत् 2069 दयानन्दाब्द : 188

सृष्टि सम्वत् 1960853113 वार्षिक : 250 रुपये

फैक्स : 23365959 ई-मेल : aryasabha@yahoo.com

Website:www.aryamahasammelan.com पृष्ठ 1 से 8 तक

आर्य केन्द्रीय सभा दिल्ली राज्य के तत्त्वावधान में

अमर हुतात्मा स्वामी श्रद्धानन्द जी का 86वाँ बलिदान दिवस भव्यता के साथ सम्पन्न

दिल्ली रामलीला मैदान में सम्पन्न हुए 86वें स्वामी श्रद्धानन्द बलिदान दिवस समारोह की अध्यक्षता करते आर्य केन्द्रीय सभा दिल्ली के प्रधान महाशय धर्मपाल जी। साथ में हैं दिल्ली सभा के प्रधान ब्र. राजसिह आर्य जी, स्वामी धर्ममुनि दुग्धाहारी, डॉ. मुमुक्षु आर्य, श्री कन्हैया लाल आर्य, आचार्य तुलसीराम जी, आर्य वीर दल दिल्ली प्रदेश के संचालक श्री वीरेन्द्र आर्य जी एवं अन्य आर्यजन। इस अवसर पर उपस्थित विशाल जन समुदाय को सम्बोधित करते सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान आचार्य बलदेव जी। *(विस्तृत विवरण एवं चित्रमय झांकियां अगले अंक में)*

वेद और योग : मानव जीवन को पूर्ण बनाने के अनिवार्य विषय-एक अतिगम्भीर गवेषणा

– डॉ. भारतेन्दु द्विवेदी

टिप्पणी *– वैसे तो वेद शब्द का मूलार्थ ज्ञान होता है, लेकिन जब हम वेद शब्द का लौकिक जीवन में प्रयोग करते हैं तो यह 'अति विशेष' ईश्वरीय महाकाव्य, जिसे वसुधा में वेद के नाम से जाना जाता है की ओर इंगित होता है। इसी प्रकार जब हम योग शब्द का लौकिक जीवन में प्रयोग करते हैं तो वह वेद में वर्णित और महर्षि पातंजल कृत योग शास्त्र या योगदर्शन समझा जाता है। आज विश्वभर में वेद और योग दोनों का महत्त्व विशेष रूप से है। द्रष्टव्य है, वेद और योग दोनों जीवन को पूर्ण बनाने वाले हैं।दोनों आत्मिक, बौद्धिक, शारीरिक और मानसिक उन्नति के लिए अतिआवश्यक हैं। जीवन की पूर्णता इनके बिना हो ही नहीं सकती। इन दोनों विषयों पर भारतीय और पश्चिमी विद्वानों ने गवेषणा, लेखन और विचार व्यक्त किए हैं। यह कहने की आवश्यकता नहीं कि वेद और योग दोनों विषय भिन्न होते हुए भी एक–दूसरे के पूरक हैं। भारत में सृष्टि उत्पत्ति से लेकर अब तक वेदों पर असंख्य गवेषणायें हो चुकी हैं और आज भी हो रही हैं। बहुत आश्चर्य और आनन्द की बात यह है कि जितने भी अनुसन्धान अभी तक हुए हैं, सब में भिन्नता होते हुए भी एक पूरकता दिखाई पड़ती है। जिसकी जितनी गहराई है, उसे उतना ही बहुमूल्य मोती महासमुन्द्र रूपी वेदों में प्राप्त हुए। ऐसा ही मोती खोजने का एक गम्भीर प्रयास आर्य जगत् के विद्वान और शिक्षक डॉ. भारतेन्दु द्विवेदी जी ने अपने इस महत्त्वपूर्ण गवेषणापूर्ण लेख में किया है। (लेखक आर्य जगत् के महान वेदज्ञ, गवेषक, लेख, शिक्षाविद और विद्वान डॉ. कपिलदेव द्विवेदीजी के बड़े सुपुत्र हैं) जिस गम्भीरता और श्रम–साध्यता से विद्वान लेखक ने प्रस्तुत लेख में मोती ढूढकर प्रस्तुत किए हैं वे कई दृष्टियों से उपयोगी हैं।* ***प्रस्तुत लेख अन्तरराष्ट्रीय आर्य महासम्मेलन–2012 दिल्ली के अवसर पर आयोजित वेद गोष्ठी के अवसर पर प्रस्तुत किया गया था।*** *उक्त वेद गोष्ठी में 20 से अधिक ऐसे लेख आर्य विद्वानों के द्वारा प्रस्तुत किए गए जो मानव मात्र को वेद, धर्म, राष्ट्र, संस्कृति, योग, अध्यात्म, साहित्य, समाज, विज्ञान, भूगोल, व्याकरण, समाज सुधार, समाज उत्थान, सामाजिक सचेतना, मानव मूल्य और विश्व सन्दर्भों के अनेक विषयों को उद्घाटित करने वाले थे। जो लेख वेद गोष्ठी में प्रस्तुत किए गए थे उन्हें इस अंक से हम क्रमशः प्रकाशित करने जा रहे हैं। आर्य सन्देश के पाठकगण, आप सभी, जिस प्रकार से आर्य सन्देश में प्रकाशित उपयोगी लेखों का स्वाध्याय करके ज्ञान अर्जित करते रहे हैं, उसी प्रकार इस लेख माला को भी समय निकाल कर स्वाध्याय करके इनकी उपयोगिता और महत्त्व के सम्बन्ध में अपनी बेबाक प्रतिक्रिया से अवगत कराएंगे। लेख में आप को किसी प्रकार की कोई शंका या जिज्ञासा हो, उसे भी बिना किसी हिचक के लिख भेजें। हमें आप की प्रतिक्रिया पत्रों के रूपमें पूर्व की तरह प्राप्त होगी, ऐसी आशा है। (09868235056)*

ज्ञानार्थक विद्धातु से घञ् प्रत्यय करने पर वेद शब्द निष्पन्न होता है। वेद आदि ज्ञान के स्रोत हैं। वेद ईश्वरीय ज्ञान है। इस सम्बन्ध में स्वामी दयानन्द ने लिखा है–'जो ईश्वरोक्त सत्य विद्याओं से युक्त ऋक् संहिता आदि चार पुस्तक हैं, जिनसे मनुष्य को सत्यासत्य का ज्ञान होता है, उनको वेद कहते हैं।' (आयोदेशरत्नमाला)

ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका में स्वामी दयानन्द ने लिखा है– जो सर्वशक्तिमान परमेश्वर है, उसी से ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद उत्पन्न हुए हैं।

चारों वेदों में ऋग्वेद ज्ञानवेद है, यजुवेद यज्ञवेद है, सामवेद उपासनावेद है और अथर्ववेद विज्ञानवेद है। ज्ञान, कर्म, उपासना और विज्ञान वेद चतुष्टय के साधन हैं। ज्ञान, कर्म और उपासना का लक्ष्य विज्ञान है। वेदवित् वही है, जिसने ज्ञान, कर्म और उपासना द्वारा विज्ञान की प्राप्ति की है। ऋक् से ज्ञान प्राप्त करते हुए, यजुः से कर्म साधना और साम से उपासना करनी चाहिए। ज्ञान, कर्म और उपासना से ही विज्ञान लोक में प्रवेश होता है। अतः मनुष्य के लिए चारों वेदों का अध्ययन मनन और चिन्तन आवश्यक धर्म है।

मनु वे वेदों को समस्त ज्ञान का भण्डार कहा है। 'सर्वज्ञानमयो हि सः।' इस प्रकार वेद समस्त ज्ञान–विज्ञान का आदि स्रोत गन्थ है। वेदों से योग के विषय में भी ज्ञान प्राप्त होता है। यौगिक क्रियाओं का भी वर्णन वेदों में है।

योग

योग शब्द युज् धातु से घञ् (अ) प्रत्यय करके बनता है। युज् धातु के तीन अर्थ हैं– योगे, संयमने और समाधौ। यहाँ योग में तीनों अर्थ का समावेश है। 1. योगे का अर्थ है मिलना और मिलाना। जीवात्मा को परमात्मा से मिलाना या उनका मिलन योग है। 2. संयमने–संयत करना, रोकना और उनका निग्रह करना। मन और इन्द्रियों को संयमित कर उन

– शेष पृष्ठ 4 पर

वेद-स्वाध्याय

सच्चे परमात्मा की स्तुति : परम सत्ता को जानने और मानने का वेद विचार

- स्वामी देवव्रत सरस्वती

सत्यमित्द्वा उ तं वयमिन्द्र स्तवाम नानृतम। महाँ असुन्वतो वधो भूरि ज्योतीषि सुन्वतो भद्रा इन्द्रस्य रातयः।। ऋ.8/62/12।

अर्थ – (वयम्) हम (तम् सत्यम् इन्द्रम्) उस बच्चे सत्य स्वरूप परमेश्वर की(इत् वा उ) ही (स्तुवाम) स्तुति करते हैं। (अनृतम् न) असत्य, झूठे ईश्वर की नहीं। (असन्वतः) उसकी स्तुति न करने वाले अथवा झूठे ईश्वर या झूठी स्तुति करने वाले का (महान वधः) महानाश होता है। (सुन्वतः) उपासक को (भूरि ज्योतींषि) बहुत ज्ञान का प्रकाश, सुख प्राप्त होता है।(इन्द्रस्य) ऐश्वर्य के स्वामी इन्द्र के (रातयः) दान, कृपा(भद्राः) कल्याण करने वाले होते हैं। मन्त्र में तीन बातें कही हैं–1.सच्चे ईश्वर की स्तुति करनी झूठे की नहीं। 2.उपासना न करने से हानि, 3. उपासना करने के लाभ। तीन तीनों पर क्रमशः विचार करते हैं'

1. ईश्वर का सच्चा स्वरूप : वैदिक धर्म को छोड़कर अन्य सभी धर्म–सम्प्रदायों में ईश्वर की कल्पना मनुष्य जैसी की गई है। यदि ईश्वर साकार है तो फिर वह सर्वज्ञ नहीं हो सकता क्योंकि एक देशी पदार्थ सर्व–व्यापक न होने से सब स्थानों के ज्ञान को प्राप्त नहीं होता । सर्वज्ञ न होने से न्याय अर्थात् यथायोग्य फल देने का सामर्थ्य नहीं रहेगा। साकार वाली वस्तु की उत्पत्ति और विनाश भी होता है। ये सारे गुण परमात्मा में आने पर वह अविनाशी नही रहेगा। इसी भाँति अन्य बहुत से दोष हैं जो ईश्वर को साकार मानने पर उसमें अध्यारोपित हो जायेंगे।

ईश्वर अवतार नहीं लेता। अवतार का अर्थ है नीचे उतरना अर्थात् सीढ़ी को अवतार करते हैं। एकदेशी वस्तु में ही एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाने–आने की क्रिया सम्भव है,सर्वव्यापक में नहीं। यद्यपि सर्वव्यापक ईश्वर में ज्ञान, बल, क्रिया देखी जाती है, क्योंकि वह चेतन स्वरूप है परन्तु जैसी मूर्तिमान पदार्थ में उत्पेक्षण–अवक्षेपण अर्थात् ऊपर फेंकना, नीचे गिरना आदि क्रियायें देखी जाती हैं, वैसी ईश्वर में नहीं।

अन्य देवी, देवता आदि ईश्वर या उसके अंशभूत अथवा सहायक नहीं हैं। ईश्वर सर्वशक्तिमान् है अर्थात् उसे जगत् की उत्पत्ति, स्थिति, प्रलय करने और जीवों को कर्मानुसार यथायोग्य फल देने में किसी दूसरे सहायक की आवश्यकता नहीं है।

ईश्वर निराकार है। उसकी कोई मूर्ति नहीं बन सकती। इसलिये जो मूर्तिपूजा में ईश्वर की कल्पना करते हैं वे झूठ का ही पक्ष लेते हैं। यद्यपि ईश्वर मूर्ति में भी है परन्तु आत्मा–परमात्मा का मेल वहीं होता है जहाँ दोनों का निवास हो। यह स्थान केवल हृदय देश ही है। गीता में कहा है– **ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशे अर्जुन तिष्ठति** (गीता. 18.61) हृदय शब्द का अर्थ भी यही है हृदि+अयम् यह परमात्मा हृदय में है।

ईश्वर कर्मो का यथायोग्य फल देता है। उसके यहाँ क्षमा का खाता नहीं है। किये हुये कर्म का फल भोगना ही होगा। जो यह कहते हैं कि नाम जप, ईमान लाने या प्रायश्चित से पाप क्षमा हो जायेंगे वे झूठे हैं।

ईश्वर के कोई दूत, पैगम्बर आदि सहयोगी नहीं हैं जिन पर ईमान लाने से सिफारिश कर पापों को क्षमा करा दें। ऐसे ही किसी गुरु में भी ऐसा सामर्थ्य नहीं है। यह अन्धविश्वास अपने पन्थ को बढ़ाने के लिये प्रचलित हुआ है। हाँ यह तो हो सकता है कि पश्चात्ताप या ईश्वर भक्ति, अच्छे लोगों की संगति करने से व्यक्ति आगे पाप करना छोड़ दे परन्तु पहले किये कर्मो का फल भोगना होगा ही।

ईश्वर की स्तुति करने से पहले उसके गुण, कर्म, स्वभाव एवं स्तुति कैसे करें, इसे जान लेना बहुत आवश्यक है अन्यथा अभीष्ट फल की प्राप्ति नहीं होगी।

2. उपासना न करने से हानि : मन्त्र में कहा है – **महाँ असुन्वतो वधः** जो ईश्वर की उपासना नहीं करता वह जन्म–मरण के चक्र में फँसा रहता है। इसी बात की पुष्टि उपनिषद् कर रही है।

न साम्परायः प्रतिभाति बालं प्रमाद्यन्तं वित्तेमोहेन मूढम्। अयं लोको नास्ति पर इति मानी पुनः पुनर्वश मापद्यते मे। कठो.2.6।।

जो धने के मोह में ग्रस्त हैं, बाल बुद्धि है और जो यह कहता है कि यही लोक, कोई ईश्वर या परलोक नहीं है, उसे परलोक साधन यम–नियमादि अच्छे नहीं लगते। ऐसा नास्तिक बार–बार जन्म, मृत्यु के वश में हो जन्म लेता और मरता है।

ईश्वर को न मानने वालों को सबसे बड़ी हानि यह होगी कि वे किसी का भय अथवा कर्मफल में विश्वास न रखने के कारण न करने योग्य कर्मो को भी करेंगे और जिनका फल दुःख रूप में मिलेगा। क्योंकि आत्मा का भोजन ईश्वर भक्ति ही है जिसके बिना मनुष्य जीवन पशु सदृश हो जायेगा।

3. उपासना करने का लाभ : जैसे अग्नि के समीप शीत से आतुर व्यक्ति बैठे तो उसकी ठण्ड दूर हो जाती है, वैसे ही ईश्वर की उपासना करने से उपासक के सब दोष,दुःख छूट कर परमेश्वर के गुण,कर्म,स्वभाव के सदृश जीवात्मा के गुण,कर्म,स्वभाव पवित्र हो जाते हैं।

उपासना से आत्मा का बल इतना बढ़ेगा कि वह पर्वत के समान दुःख प्राप्त होने पर भी न घबरायेगा और सबको सहन कर लेगा

भूरि ज्योतींषि सुन्वतः प्रभु भक्ति करने वाले को ज्ञान का प्रकाश प्राप्त होता है जिससे जन्म–मरण का बन्धन छूट मोक्ष की प्राप्ति होती। समाधि जन्य जो सुख मिलता है, उसे शब्दों में अभिव्यक्त नहीं किया जा सकता। यह गूंगे के लिये मिश्री स्वाद के समान अन्तःकरण से ग्रहण किया जाता है जिसे वाणी अभिव्यक्त नहीं कर सकती।

भद्रा इन्द्रस्य रातयः सब ऐश्वर्यो के स्वामी इन्द्र के दान मानव का कल्याण करने वाले हैं जो उपासक को प्राप्त होते हैं।

– क्रमशः

महर्षि देव दयानन्द का कृतित्व और व्यक्तित्व : जर्मन साहित्यकार कवयित्री ए. क्रिसेटाइन एलबर्स की दृष्टि में

महर्षि देव दयानन्द के कृतित्व और व्यक्तित्व पर भारत में अनेक चिन्तकों, समाजसेवियों, साहित्यकारों और दार्शनिकों ने लेखनी चलाई है। लेकिन विदेशी विद्वानों और दार्शनिकों ने क्या लिखा और कहा है, बहुत कम लोगों को ज्ञात है। जर्मन साहित्यकार कवयित्री ए. क्रिसेटाइन एलबर्स ने महर्षि के कृतित्व और व्यक्तित्व को भावपूर्ण कविता में ढाला है। ज्ञातव्य है, महर्षि से सन्दर्भित ऐसी कविताएँ अभी तक भारत में नहीं लिखी गई, इससे इन कविताओं का महत्त्व और भी बढ़ जाता है। इसका काव्यानुवाद वेद-विचारक और नवयोग के प्रतिस्थापक डॉ. ज्ञानचन्द्रजी ने किया है। यह श्रद्धात्मक काव्य अत्यन्त श्रद्धा के साथ शारावाहिक रूप में दिया जा रहा है। आर्य महानुभाव इसे बहुत ही श्रद्धा और भक्तिभाव से परिपूर्ण होकर ही पढ़ें। प्रस्तुत धारावाहिक का आठवा भाग प्रस्तुत किया जा रहा है। इसमें महर्षि को 'भारत का एक महान धर्म और मानवता के योद्धा के रूप में' चित्रित किया गया है। -अखिलेश आर्येन्दु

SWAMI DAYANANDA SARASWATI
THE DAUNTLESS MAN OF FREEDAOM, AND THE GREAT. GLORIOUS INDIA.

"Oh the mother-land of glory,
India, greatest of the Nation
In those days, when still the Vedas
Unadulte rate gave their message.
"Oh the mother-land degraded,
India sunken in her customs,
The pure Teachings marred and twisted"
"He the Brahmin in who has wisdom.
Not by birth is one a Brahmin
But by insight in the scriptures
Holy life and selfless labour,
'Not by birth is one an out-caste,
But by low, degraded actions,
Unclean speech, mouth filled with slander
Back biting and treach'rous habits,"
"Man is that, what he desireth,
What of his own self he maketh,
Strive ye upward for the Highest,
Live in pure deeds and pure thinking,"
Thus did ever he extol them,
But the dark forces revolted,
Feared this dauntless man of freedom,
Stooped to low bred persecution,
Yet his noble heart, all stainless
Harboured not revenge nor anger,
Only words of kind forgiving
Passed the lips of Dayananda
Evil hands threw stones and poison,
But when caught the wretched culprit
Trembling in the hands of justice,
He, the Rishi, interceded,
Got, released the evil-doer,
"I have come to give men freedom,
Nor to see them put in prisons,"
Thus rang forth his golden message,

स्वामी दयानन्द सरस्वती
स्वातन्त्र्य व महान एवं गौरवशाली भारत का वह निर्भीक नरपुंगव

''हा! मातृ–भूमि महिमाशाली,
भारत, हे राष्ट्रों में महान
वे दिवस अभी जब वेद ज्ञान,
अपमिश्रण रहित, शुद्धता में
करता था शुभ विद्या–प्रदान''
''हा! मातृ–भूमि अब भ्रष्ट–पतित,
डूबी निज रूढ़ाचारों में,
परिशुद्ध ज्ञान विद्रूप बने,
विपरीताशय एवं विकृत''
''ब्राह्मण वह जिसमें प्रज्ञा हो
शास्त्रों की अन्तर्दृष्टि तथा
जिसका जीवन हो शुचि–पवित्र–
निःस्वार्थ परिश्रम हो जिसका।''
''जन्म से न होता निम्न जाति का कोई भी
होता है केवल निम्न,भ्रष्ट कर्मो से नर
हो अशुभ वाक्, जिसके मुख में हो भरी हुई
मिथ्यारोपण एवं अपमानपूर्ण भाषा''
''जो पर–निन्दक, कपटी अभ्यासों में तत्पर,
मानव जैसी इच्छा करता, वैसा ही बनता जाता है,
जैसा रच ले निज आत्मा को
वैसा मन होता जाता है।''
''कोई सर्वोच्च प्रगति निमित्त संघर्ष करे,
शुभ कृत्यों एवं शुभ विचारों में रहता है''
वह सदा सभी को उत्साहित करता रहता ।
पर अन्धकार की शक्ति विरोधी खड़ी हुई,
निर्भीक मुक्ति–प्रेमी मानव से डरती सी,
अति निम्न कोटि के उत्पीड़न आरम्भ हुए,
पर उसका उच्च उदार हृदय जो निष्कल्मष,
प्रतिशोध, क्रोध को आश्रय कभी न देता था।
बस क्षमा, अनुग्रह की भाषा ही होती थी–
निःसृत, उस स्वामी दयानन्द के अधरों से।
दुष्टों के हाथों ने फेंके प्रस्तर–पाहन,
अति छिपे हुए विष प्रायः दिए गए उसको,
पर जब भी वे षड्यन्त्री दुष्ट गए पकड़े,
न्यायी हाथों में होते थे कम्पित, थरथर।
मध्यस्त बना वह ऋषि बचाता था उसको,
उन दुष्ट–कर्मियों को उन्मुक्त कराता था,
**''मैं तो मनुजों को मुक्त कराने आया हूँ,
उनको कारा में बन्द कराने हेतु नहीं।''**
यह थी उनकी गुंजरित, मधुर वाणी।

प्रकृति हमसे क्या कहती है? : एक वैज्ञानिक और तार्किक विश्लेषण

- डॉ. ब्रह्ममुनि

हमारे इर्द–गिर्द जो सृष्टि है, उसका रहस्य समझ लेना बड़ा ही गहन और चमत्कारिक है। इस सृष्टि में सूर्य, चन्द, तारे, पृथ्वी, वायु, जल, वनस्पति (पेड़–पौधे),पशु, पक्षी, मानव, पहाड़, नदियाँ, मरुस्थल (सेहरा) सागर आदि पदार्थ दिखाई देते हैं। जिज्ञासु वृत्ति से निरीक्षण करने पर आज भी निम्न पदार्थ प्रत्यक्ष रहने के प्रमाण प्राप्त होते हैं।

सृष्टि में चन्द्र और सूर्य का जैसा सम्बन्ध है, वैसी ही सृष्टि का पृथ्वी और अन्य सर्भी पदार्थो का एक दूसरे से सम्बन्ध है। उसी प्रकार अन्य ग्रहों से भी उनका सम्बन्ध होगा ही। सूर्य उदित होने पर सारे पशु–पक्षी अपने–अपने कार्य–कलाप में लग जाते हैं और सूर्य ढलते ही सो जाते हैं।

पेड़–पौधे बिना सूर्य के नहीं रह सकते। बिना पेड़–पौधे के पशु–पक्षी नहीं रह सकते। पौर्णमासी को जब चन्द्र पूरा दिखाई देता है तब पृथ्वी के सागरों में ज्वार आता है और अमावस्या को चन्द्र की कला अत्यन्त छोटी होती है तब, उन्हीं सागरों में भाटा होता है। यह ज्वार–भाटा मात्र सागरों में होता है, ऐसा नहीं, अपितु भूगर्म के पानी में, पेड़–पौधों के तथा पशु–पक्षियों के शरीर में स्थित पानी में भी ज्वार–भाटे का प्रभाव अवश्य होता है। सूर्य सम्पूर्ण विश्व को ऊर्जा देने वाला, रोगों को नष्ट करने वाला, अन्न देने वाला, दिन और रात का निर्माण करने वाला एवं ऋतुओं को निर्मित करने वाला महत्वपूर्ण घटक है। फिर ऐसे सूर्य का निर्माण अपने–आप कैसे हुआ? सूर्य और धरती का अन्तर अधिक होने पर भी निर्वाह न होगा अथवा यह अन्तर कम होकर भी निर्वाह नहीं होगा। फिर ये सब अपने–आप ही कैसे? धरती पर 3/4 पानी ही है तथा भूपृष्ठ मात्र 1/4 ही है। इनका अनुपात भी कम–अधिक हुआ तो भी निर्वाह न होगा। वसुशा (पृथ्वी) अपने इर्द–गिर्द और सूर्य के इर्द–गिर्द ही क्यों घूमती है? पृथ्वी को घूमने के लिए किसने गति प्रदान की? यह सम्पूर्ण सृष्टि कार्य–जगत् है तो दूसरा कारण–जगत् है। सम्पूर्ण कारण जगत् में अन्धकार ही अन्धकार होता है। दृश्य जगत् अदृश्य हो जाता है।

इस सम्पूर्ण सृष्टि में अनेक जड़–पदार्थ हैं। वे हैं सूर्य, चन्द्र, तारे, जल, वायु, अग्नि आदि। दूसरे जो कुछ सचेतन संयुक्त पदार्थ हैं, उन्हें सजीव कहा जाता है। इन जड़ पदार्थो का सजीव (चेतन) पदार्थो से घनिष्ठ सम्बन्ध है। प्रत्येक पदार्थ के कण–कण में देखने पर उनकी संरचना भी क्या कहती है?

इलेक्ट्रान को किसने गति दी? प्रत्येक पदार्थ की संरचना पृथक्–पृथक कैसे हुई? न्यूटन पहले या पहले गुरुत्व? विज्ञान की जितनी भी खोजें हुई या अविष्कार हुए, उन सब के आधार पर सृष्टि के नियमों का आकलन करने का प्रयास हुआ है। अतः सच्चे विज्ञानवेत्ता ने यह सब स्वीकार करते हुए ही अन्वेषण यथार्थ शब्द का प्रयोग किया है। अर्थात् जो तत्त्व प्रकृति में पहले ही विद्यमान है, हम उसे पुनः खोजने का और जानने का प्रयास कर रहे हैं। सृष्टि के जो नियम हैं , वे सारे के सारे अटल नियम हैं जो सभी ओर चक्ररूप से चल रहे हैं। सृष्टि के इस चक्र में अग्र दिशा है। इसमें समन्वय है। यह एक योजना है, इस चक्र का उदेश्य एवं दिशा सुनिश्चित है। उसमें गिना–गिनाया परिणाम है। यह एक पूर्व नियोजित कार्यक्रम है।

पशु–पक्षियों (जीव–जन्तुओं) का निरीक्षण : पशु–पक्षियों की ओर देखने पर भी अनेक चमत्कार दिखाई देते हैं। पानी में रहने वाले (जलचरों के) शरीर की रचना, पानी में विद्यमान ऑक्सीजन को ग्रहण करने में पानी का प्रवाह सहने में सक्षम होती है। इन जलचरों एवं भूचर जीवों की शरीर–संरचना पृथक्–पृथक् होती होती। हर पशु के देहावयव भिन्न–भिन्न होते हुए भी, उनमें सभी अवयव एकत्रित–समन्वित होकर कार्य–व्यापार करते हैं। उनकी त्वचा, रक्त (खून), मांस, मेद, मज्जा, अस्थि (हड्डी) आदि की व्यवस्था किस प्रकार हुई होगी? ये सभी चीजें आज भी निरन्तर कैसे बनती होंगी? यह भी एक अचरज ही है।

बिना पेड़–पौधों के पशु–पक्षियों का निर्वाह नहीं हो सकता। वायु, जल, सूर्य, भूमि तो आवश्यक हैं ही। इन सब का परस्पर सम्बन्श किसने स्थापित किया? यह अनिर्बन्ध योजना किसने की है? सरकार (शासन) ने, वैज्ञानिकों ने या पशुओं ने? या क्या अपने–आप?

पशुओं में भी एक विशेष जीवन–चक्र होता है। उनमें नर और मादा ऐसे भेद हैं। नर और मादा भिन्न–भिन्न होते हैं, तब उनके भी प्रौढ़ावस्था या Maturation period का तालमेल कौन बिठाता है? एक–दूसरे की ओर आकर्षित होने की व्यवस्था कौन करता है? यह एक महान् आश्चर्य ही है नहीं तो क्या? शरीर में विभिन्न प्रकार की प्रणालियाँ (Systems) हैं, उन प्रणालियों के कार्य भी जीवन के निर्वाह के लिए ही हैं। इनमें से किसी एक प्रणाली के ठप्प होते ही सम्पूर्ण जीवन ही ठप्प हो जाता है।

एक पशु के लिए नियत भक्ष्य (अन्न) दूसरे के लिए जहर है। एक पशु की विष्ठा दूसरे पशु का अन्न है तो वही तीसरे के लिए जहर है। शरीर में भी जहर है। वह भी एकदम अन्तर्गत। यह कोई साधारण बात नहीं है। भिन्न–भिन्न अवयव किस प्रकार उत्पन्न होते हैं? अवयवों के बिना निर्वाह हो ही नहीं सकता। तो फिर इन अवयवों की याचना (मांग) भी किसने की थी? वहाँ क्या किसी ने रैली (मोर्चा) निकाली थी? इन अवयवों के साथ ही सिर पर के साधारण बाल (केश) तक को कोई सरकार, वैज्ञानिक या ख़ुद वह पशु तक निर्माण नहीं कर सकते। फिर यह सब कुछ होता है तो कैसे? बिना किसी नियोजन के या बिना किसी पूर्व–उद्देश्य के या अपने–आप? इनका निर्माण आखिर होता है कैसे? सचमूच ये सभी बातें अनाकलनीय हैं।

एक जीव दूसरे को मारकर खा जाता है, दूसरा तीसरे को, तीसरा चौथे को, ऐसी एक शृंखला ही चलती रहती है। एक जीव जहरीला है, किन्तु उसे खाने वाले अन्य जीव भी हैं। बिच्छू को छिपकली खाती है, छिपकली को बिल्ली, बिल्ली को कुत्ता खा जाता है। उसी प्रकार चूहों को साँप तथा चूहों और साँपों को बिल्ली खा जाती है। अर्थात् एक जीव दूसरे का मारक है। (जीवो जीवस्य जीवनम्) प्रकृति में सन्तुलन रखने की यह एक व्यवस्था (प्रबन्ध) है। हरेक प्राणी पर्यावरण को सुव्यवस्थित रखने के लिए और पर्यावरण को शुद्ध रखने के लिए आवश्यक घटक (हिस्सा/अंश) है। पेड़–पौधों और पशु–पक्षियों में भी सन्तुलन होना ही चाहिए। यह सन्तुलन न हो तो निर्वाह होना असम्भव है।

कुछ वर्ष पूर्व जापान में अनेक लोगों ने मेढकों को मारकर खा लिया। इस कारण मेंढकों की संख्या कम होने से ,कीटकों और मच्छरों की संख्या बहुत बढ़ गई। उनकी संख्या हर गड्ढे–नाले में बढ़ती ही रही। तब वैज्ञानिकों को ज्ञान हुआ कि मेंढकों की कमी के कारण ही कीड़े–मकोड़े बढ़ गये। इसलिए 'मेढक पालो–स्वास्थ्य बचाओ' यह अभियान आरम्भ हुआ। घरों में विद्यमान मकड़ी, छिपकली, कॉकरोच, झींगुर आदि से कीड़े–मकोड़ों के साथ ही साँप की केंचुल भी मानव की सुरक्षा करती है। किन्तु आज इन्हें लोग मार डालते हैं। परिणामतः मच्छरों की परेशानी प्रारम्भ हो जाती है। फिर उन मच्छरों को मारने के लिए प्रदूषक वर्द्धक कछुआ –मच्छर अगरबत्ती और अन्य अधिक व्ययकारी चीजों का इस्तेमाल करने का उद्योग प्रारम्भ होता है।

पशुओं से बच्चे–बछड़े उत्पन्न होते हैं, उनकी शारीरिक वृद्धि होकर वे बड़े हो जाते हैं। अतः जन्म, विकास, प्रजोत्पादन और मृत्यु यह सभी सजीवों के जीवन का क्रम है। मानव निर्मित्त किसी भी पदार्थ में यह क्रम दिखाई नहीं देता है।

मानवों का निरीक्षण : मानवों की ओर देखो। मानव यह सर्वश्रेष्ठ पशु है। उसने इस धरती पर अनेक भले और बुरे कार्य भी किये हैं। किन्तु मानव जो कुछ करता है वह सभी हमें प्रकृति में दिखाई नहीं देगा। अर्थात् वह प्राकृतिक या नैसर्गिक नहीं हो सकता। जो प्राकृतिक है, उसका निर्माण मानव कर ही नहीं सकता, यह मूलभूत बात समझलेना आवश्यक है।

मानव घर–द्वार, कारखाने, बस रेलगाड़ी, हवाईजहाज,टी.वी. रेडियो, इंजिन आदि भौतिक साधन एवं सुखकारक पदार्थो का निर्माण कर रहा है। प्रकृति में भी ऐसी चीजें हैं किन्तु वे (अनुकृति) नकल के रूप में कहीं भी दिखेगी नहीं। मानव ने एक बसगाड़ी बनायी तो उसमें अनेक नटबोल्ट्स दिखाई देते हैं। भिन्न–भिन्न भाग बनाकर उन्हें जोड़कर एक बनाया जाता है। निर्माण के समय पहले वह छोटा बच्चा थी,बाद में बड़ी हो गई, और फिर दो बसें एकत्रित आकर नयी बस की उत्पत्ति हुई, ऐसा कभी भी नहीं हो सकता। इसलिए मानव यदि स्वतन्त्र एवं बुद्धिमान है तो भी वह प्रकृति को मात दे सकता है। यह खुशफहमी गलत है। मानव के हाथों में प्रकृति का कुछ भी नहीं है। यदि मानव कुछ भी कर कराकर प्राकृतिक नियमों के विरूद्ध आचरण करेगा तो अनेक पीढ़ियों तक दुःख भुगतता रहेगा। आज प्राकृतिक सन्तुलन बिगड़ने के कारण ही ऋतु (मौसम) बदल गये हैं। वृष्टि भी परिवर्तित हुयी। (अतिवृष्टि तथा अनावृष्टि) और प्रदूषण भी बढ गये हैं। परिणामतः रोगों में अपार वृद्धि हुई। जिसका नतीजा हम आज भी भुगत रहे हैं। किन्तु सही मायने में मानव प्रकृति उसमें के जल, वायु, अन्न आदि घटकों के बिना और उनके नियमों का पालन किये बिना जी ही

– शेष पृष्ठ 6 पर

टिप्पणी– प्रस्तुत लेख को सम्पादित करते हुए हमें महाकवि सुमित्रानन्दन पन्त की वे पक्तियाँ याद आ रही हैं, जिसमें कहा गया है 'प्रकृति की आवाज सुनो '। वह हमसे क्या कहती है। कहती है–आगे बढ़ो, बढ़ते चलो, रुको नहीं। प्रकृति का अर्थ प्र+कृति अर्थात् विशेष कृति। प्रकृति से मनुष्य का सीधा सम्बन्ध है। जिस प्रकार से मनुष्य अपनी प्रकृति के अनुरूप ही होता है और अपनी प्रकृति से बाहर नहीं निकल सकता, उसी प्रकार हम भी जिस ईश्वरीय प्रकृति में विचरण करते हैं उससे बाहर नहीं निकल सकते हैं। प्रस्तुत लेख में प्रकृति से हमारा जीवन किस प्रकार जुड़ा हुआ है और विज्ञान का इस सन्दर्भ में क्या दृष्टिकोण है को बहुत ही विद्वतापूर्ण ढंग से उद्घाटित किया गया है। लेखक ने उन पश्चिमी और वाममार्गी धारणाओं और मान्याताओं को कठघरे में खड़ा किया है जो यह मानते हैं कि ब्रह्माण्ड की सम्पूर्ण क्रियाएँ किसी विशेष कर्ता या सत्ता के द्वारा संचालित नहीं होतीं बल्कि अपने–आप होती जाती हैं। ज्ञातव्य है यही विचार विश्वभर के नास्तिकों का भी रहा है। प्रस्तुत लेख को प्रकाशित करने का हमारा उद्देश्य उन नास्तिक और वाममार्गी विचारों के खोखलेपन को उद्घाटित करना है जो विश्व समाज को नास्तिकता के महाअन्धकार में डुबोते रहे हैं। आशा है लेख पाठकगणों को पसन्द आएगा।

प्रथम पृष्ठ का शेष

वेद और योग : मानव जीवन को पूर्ण बनाने के अनिवार्य ....

पर नियंत्रण करते हुए जीवन को संयमी बनाना योग है। (3) समाधौ–चित्त वृत्तियों का निरोध या रोकना। मोक्ष की प्राप्ति के लिए चित्त की वृत्तियों को संयमित करना। इस प्रकार योग का अर्थ है– योग वह विद्या है, जिसके द्वारा जीवन को संयमित बनाते हुए चित्त की वृत्तियों का निरोध करके जीवन के लक्ष्य मोक्ष की प्राप्ति।

महर्षि पतंजलि ने चित्त की वृत्तियों का निरोध को योग कहा है–

योगश्चित्तवृत्ति निरोधः।

आजकल योग का प्रचलित अर्थ विशिष्ट प्रकार के शारीरिक व्यायाम (आसन) एवं शुद्धि क्रियाओं से लेते हैं। योग का अभ्यास स्वास्थ्य लाभ के साथ पारमार्थिक लाभ भी प्रदान करता है। योग साधना मनुष्य का पथ प्रदर्शन का कार्य करती है और साधक आत्मसाक्षात्कार के मार्ग में प्रवृत्त हो जाता हैं। इस प्रकार योग विद्या का उद्देश्य है– आत्मा, परमात्मा और ब्रह्म के स्वरूप को ज्ञात कर मोक्ष की प्राप्ति तथा आत्मसाक्षात्कार। योग साधना के मुख्य दो भेद हैं– राजयोग और हठयोग।

राजयोग

राजयोग आत्मिक या आध्यात्मिक उन्नति को प्रमुखता देता है। हठयोग शारीरिक उन्नति और शारीरिक स्वास्थ्य को प्रधानता देता है। हठयोग राजयोग का पूरक है। राजयोग सर्वोच्च योग साधना पद्धति है। राजयोग को योगसाधना की सर्वोत्तम विधि कहा गया है।

योगानां राजा राजयोगः।

राजयोग के चार उपभेद हैं 1. ज्ञानयोग, 2. कर्मयोग, 3. भक्तियोग, 4. ध्यानयोग।

1. ज्ञानयोग : ज्ञानयोग माया के आवरण को हटाता है। यह आत्मसाक्षात्कार के द्वारा परब्रह्म का ज्ञान कराता है। मोक्ष का मार्गदर्शक है।

2. कर्मयोग : आसक्ति का परित्याग कर कार्य की सफलता और असफलता में समभाव रखते हुए कर्म करना मनुष्य का कर्तव्य है, यह ज्ञान कराता है। मनुष्य अनासक्ति भावना को बढ़ाते हुए कर्तव्य भावना से कर्म करेगा, उतना ही उच्च कोटि का साधक बन सकेगा।

3. भक्तियोग : भक्तियोग में भक्तिभावना मुख्य है। भक्त परमात्मा को आत्मसमर्पण कर देता है। उच्च स्थिति में वह परमात्मा से एकत्व की अनुभूति करता है।

4. ध्यानयोग : ध्यानयोग मन को एक तत्त्व के चिन्तन में लगाकर समाधि के लिए भूमिका तैयार करता है।

हठयोग

हठयोग में शारीरिक उन्नति की पुष्टि, अङ्ग–प्रत्यङ्गों की दृढ़ता, नाड़ी–संस्थान पर अधिकार आदि पर विशेष बल दिया जाता है। यह राजयोग की पूरक पद्धति है। इसमें आसन, प्राणायाम और षट्कर्म को अधिक महत्त्व दिया गया है।

हठप्रदीपिका में कहा गया है कि हठयोग राजयोग की सिद्धि के लिए सीढ़ी के तुल्य है।

केवलं राजयोगाय हठविद्योपदिश्यते।

हठप्रदीपिका में स्पष्ट किया गया है कि योगसाधना की सफलता के लिए हठयोग और राजयोग दोनों अनिवार्य हैं। हठयोग से शरीर और मन पर नियंत्रण होता है और राजयोग से आध्यात्मिक सिद्धि प्राप्त होती है।

हठं विना राजयोगो, राजयोगं विना हठः। न सिध्यति ततो युग्मम्, आनिष्पत्तेः समभ्यसेत्।।

महर्षि पतंजलि ने योग के 8 अंग बताए हैं। ये हैं –1. यम, 2. नियम, 3. आसन, 4. प्राणायाम, 5. प्रत्याहार, 6. धारणा, 7. ध्यान, 8. समाधि।

~~यमनियमासनप्राणायामप्रत्याहारधारणाध्यानसमाधयोऽष्टावङ्गानि~~

1. यम– यम पांच हैं। अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह।

अहिंसासत्याऽस्तेय–ब्रह्मचर्याऽपरिग्रहा यमाः।

इसमें किसी देश, जाति या काल आदि का बन्धन नहीं है। ये मानव मात्र की उन्नति, विकास ओर विश्वशान्ति के सूत्र हैं। अतः सभी धर्मों ने इन्हें स्वीकार किया है। पतंजलि ने इसे सार्वभौमिक महाव्रत कहा है–

सार्वभौमा महाव्रतम्।

2. नियम : नियम पाँच हैं। 1. शौच, 2. सन्तोष, 3. तप, 4. स्वाध्याय, 5. ईश्वर प्रणिधान।

शौच सन्तोष–तपः–स्वाध्यायेश्वरप्रणिधानानि नियमाः।

3. आसन– स्थिर भाव से सुखपूर्वक बैठना पतंजलि के अनुसार आसन है। किसी आसन में पर्याप्त समय तक बैठने का अभ्यास करने से साधना में विशेष प्रगति होती है। योगदर्शन के अनुसार आसन को सिद्ध करने से उतने समय तक सुख–दुख, सर्दी–गर्मी आदि द्वन्द्वों का प्रभाव शरीर पर नहीं पड़ता है।

स्थिर सुखम् आसनम्।
ततो द्वन्द्वानभिघातः।

4. प्राणायाम : प्राणायाम का अर्थ है –प्राणानाम् आयामः प्राणों का विस्तार, प्राणों पर नियंत्रण, प्राणों को अपने वश में करना, प्राणों को इच्छानुसार छोड़ना और रोकना। पतंजलि ने श्वास और प्रश्वास की गति को रोकने को प्राणायाम कहा है। प्राणायाम मुख्य रूप से तीन हैं– पूरक, कुम्भक और रेचक।

तस्मिन् सति श्वास– प्रश्वा सयोर्गति–विच्छेदः प्राणायामः।

5. प्रत्याहार : प्रत्याहार है इन्द्रियों को अपने बाह्य विषयों से हटाकर अन्दर की ओर अन्तर्मुखी होना। इसमें इन्द्रियाँ चित्त के अधीन रहती हैं। इन्द्रियों की चंचलता प्रत्याहार की सिद्धि होने पर समाप्त हो जाती हैं।

ततः परमा वश्यतेन्द्रियाणाम्।

6. धारणा : चित्त को केन्द्रित और एकाग्र करने के लिए किसी विशेष स्थान या बिन्दु पर केन्द्रित करना।

देशबन्धश्चित्तस्याणाम्।

7. ध्यान : धारणा ध्यान की अगली कोटि है। महर्षि पतंजलि के अनुसार धारणा में प्रत्यय ज्ञान का एक सा बना रहना ध्यान है अर्थात् ज्ञानात्मक वृत्ति का निरन्तर प्रवाह ही ध्यान है।

तत्र प्रत्ययैकतानता ध्यानम्।

8. समाधि : पतंजलि के अनुसार उसी ध्यान में जब अर्थ अर्थात् ध्येय मात्र का प्रकाश रह जाए और समाधिस्थ व्यक्ति अपने रूप से शून्य सा हो जाए तो उसे समाधि कहते हैं। ध्यान और समाधि में अन्तर यह है कि ध्यान में ध्याता, ध्यान और ध्येय। इन तीनों का ज्ञान योगी को रहता है परन्तु समाधि में ध्येय मात्र का प्रकाश रह जाता है। ध्याता और ध्यान न रहते हो यह नहीं होता। ये उपस्थित रहते हैं परन्तु इनका स्वरूप शून्य सा हो जाता है। ध्याता को अपनी सुध–बुध नहीं रहती और वह केवल ध्येय के प्रकाश में ही निमग्न और तल्लीन हो जाता है।

तदेवार्थमात्रनिर्भासं स्वरूपशून्यमिव समाधिः।

वेद और योग

ऋग्वेद में कहा गया है कि जिस परम ब्रह्म परमेश्वर के बिना प्रकाशपूर्ण ज्ञानी का जीवन–यज्ञ भी सफल नहीं होता, उसी में ज्ञानियों को अपनी बुद्धि और कर्म का योग करना चाहिए। उसी परमब्रह्म में अपनी बुद्धि और कर्म को अनन्य रूप में एकाग्र करना चाहिए। उनकी बुद्धि उस परमब्रह्म के साथ तदाकार हो जाती है और वह उनके कर्मों में भी ओत–प्रोत हो जाता है।

यस्मादृते न सिध्यति यज्ञो विपश्चितश्चन। स धीनां योगमिन्वति।

यजुर्वेद के 11 वें अध्याय में योगाभ्यास में विवरण प्राप्त होता है। मनुष्य परमेश्वर आदि पदार्थों के ज्ञान के लिए पहले अन्तःकरण की वृत्तियों को योगाभ्यास से युक्त करे। जिससे इन्द्रियों का प्रकाश बाहर न जाकर बुद्धि और मन की स्थिरता में सहायक हो।

युञ्जानः प्रथमं मनस्तत्त्वाय सविता धियः। अग्नेर्ज्योतिर्निचाय्य पृथिव्या अध्याऽभरत्।।

हम लोग सबको उत्पन्न करने वाले परमेश्वर की आराधना रूप यज्ञ में लगे हुए मन के द्वारा परमानन्द की प्राप्ति के लिए पूर्ण शक्ति से प्रयत्न करें। अर्थात् हम उस परमब्रह्म की प्राप्ति के लिए पूर्ण शक्ति से योगाभ्यास करें।

युक्तेन मनसा वयं देवस्य सवितुः सवे। स्वर्ग्याय शक्त्या।।

यजुर्वेद के अगले मंत्र में कहा गया है कि योग के पदार्थों के ज्ञान से परमात्मा में मन को युक्त करके बुद्धि से विद्या के प्रकाश को, सुख को प्राप्त करते हैं। अर्थात् परमात्मा का प्रकाश प्राप्त करते हैं।

युक्त्वाय सविता देवान्त्स्वर्यतो धिया दिवम्। बृहज्ज्योतिः करिष्यतः सविता प्र सुवाति तान्।।

यजुर्वेद में कहा गया है कि जो नियम से आहार–विहार–योगाभ्यास करते हुए जितेन्द्रिय पुरुष एकांत में अपनी आत्मा को परमात्मा के साथ युक्त करते हैं। वे तत्त्वज्ञान को प्राप्त होकर परमानन्द की प्राप्ति करते हैं।

युञ्जते मन उत युञ्जते धियो विप्रा विप्रस्य बृहतो विपश्चितः। वि होत्रा दधे वयुनाविदेक इन्महि देवस्य सवितुः परिष्टुतिः।।

यजुर्वेद के अगले मंत्र में कहा गया है कि योगाभ्यास को चाहने वाले मनुष्य को चाहिए कि जिन योगियों ने सत्य वाणी से संयुक्त सत्कार्यों से योगाभ्यासपूर्वक ब्रह्मज्ञान किया था, उनकी संगति करें, उनकी संगति से योग की विधि को जानकर ब्रह्मज्ञान का अभ्यास करें। मंत्र में कामना की गई है कि जिस प्रकार हमारे पूर्वज अच्छे सन्तानों के तुल्य ब्रह्मज्ञान प्राप्त करते हुए मोक्ष को प्राप्त हुए उसी प्रकार मैं भी योगाभ्यास के द्वारा ईश्वर के स्थानों को प्राप्त करता हुआ मोक्ष को प्राप्त होऊँ।

युजे वां ब्रह्म पूर्व्यं नमोभिर्वि एतु पथ्येव सूरेः शृणवन्तु विश्वे अमृतस्य पुत्रा आ ये धामानि दिव्यानि तुस्थुः।।

ऋग्वेद के एक मंत्र में कहा गया है– हे सत्य के बल से सम्पन्न मरुत् अर्थात् पंचप्राण, अपान, समान, उदान और व्यान तुम्हारी महिमा से वह परमतत्त्व हमारे सामने प्रकाशित हो गया। विद्युत सदृश अपने प्रकाश से हमारे पापों को नष्ट कर डालो। हृदय गुफा में स्थित अंधकार को दूर कर दो जिससे वह अंधकार सत्य की ज्योति में डूबकर तिरोहित हो जाए। हमारा अभीष्ट प्रकाश अर्थात् परम तत्त्व के साक्षात्कार से प्राप्त होने वाला प्रकाश प्रकट कर दो।

यूयं तत् सत्यशवस आविष्कर्त महित्वना। विध्यता विद्युता रक्षः।।
गूहता गुह्यं तमो वि यात विश्वमत्रिणम्। ज्योतिष्कर्ता यदुश्मसि।।

अथर्ववेद के एक मंत्र में कहा गया है कि आठ चक्रों और 9 द्वारों से युक्त यह देहपुरी एक अपराजेय देव नगरी अयोध्या है। इसमें एक तेजस्वी कोश है जो ज्योति और आनन्द से परिपूर्ण है। इस मंत्र में शरीर में विद्यमान आठ चक्रों का स्पष्ट रूप से वर्णन किया गया है।

अष्टाचक्रा नवद्वारा देवानां पूरयोध्या। तस्यां हिरण्ययः कोशः स्वर्गो ज्योतिषावृतः।।

– शेष अगले अंक में

चिन्तन

अन्ति सन्तम् न जहाति, अन्ति सन्तम् न पश्यति।

– डॉ. कविता वाचक्नवी

यह लेख जब तक प्रकाशित होगा सम्भवत: विश्व में प्रलय की घटना की तिथि बीत चुकी होगी और प्रलय न होने के बाद उन लोगों को बहुत राहत महसूस होगी जो प्रलय की भविष्यवाणी से आतंकित थे।

वर्षभर पूर्व ही 21 दिसंबर 2012 को प्रलय की भविष्यवाणी की गई थी कि यह समूचा जगत् नष्ट होने जा रहा है। दूसरी ओर, जब यह लेख आप पढ़ रहे हैं, तब तक यह प्रमाणित हो चुका है कि ये कयास केवल झूठ थे क्योंकि आप व हम सभी उसी प्रकार व उतने ही सुरक्षित हैं जितने कि सामान्यत: हमें होना चाहिए।

इन दोनों तिथियों के एकदम सन्निकट खड़े होकर क्यों न कुछ देर को मानो एक ऐसी रोचक काल्पनिक उड़ान ली जाए कि विश्व वास्तव में समाप्त होने जा रहा है और कुछ भी नहीं बचेगा। परन्तु जैसा कि मानव स्वभाव है सामान सौ बरस का, पल की खबर नहीं के चलते हम सब, कुछ न कुछ संहालने, बचाने और सहेजने के लिए अवश्य तत्पर होंगे, होना भी चाहिए।

भारतीय होने के नाते हम सबको विश्वास है कि प्रलय के बाद भी पुन: नया सृष्टिचक्र चलने ही वाला है। हमारी दार्शनिक स्थापनाओं को काव्य में पिरोकर प्रसाद जी ने लिखा था। हिमगिरि के उतुंग शिखर पर बैठ शिला की शीतल छाँह/एक पुरुष भीगे नयनों से देख रहा था प्रलय प्रवाह..... बँधी महावट से नौका थी सूखे में अब पड़ी रही, उतर चला था वह जल–प्लावन और निकलने लगी मही। अर्थात् एक नौका और एक पुरुष तो कम से कम बचे ही हुए थे। मान लीजिए, यदि प्रलय आ ही जाता तो वह क्या वस्तु हो सकती थी जिसे मैं बचाना चाहती.. इस हायपोथेटिकल स्थिति की कल्पना करते ही मुझे मानव मात्र के लिए बचा कर रखी जाने वाली एकमात्र वस्तु लगती है–भारतीय वाङ्मय! समूचा भारतीय वाङ्मय तो यद्यपि बहुत विशाल है, वह समूचा यदि सुरक्षित नहीं किया जा सके तो फिर समूचा आर्ष साहित्य (वेद, वेदांग, उपांग, उपनिषद्, ब्राह्मण व आरण्यक) बचा लिया जाना चाहिए। परन्तु यदि वह भी मैं न बचा पाऊँ तो इनका मूलस्रोत (चारों वेद) बचा रहे तो भी मानवता बची रहेगी और सारा ज्ञान–विज्ञान भी। महर्षि दयानन्द सरस्वती ने लिखा भी था– वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। कुछ और भयावह कल्पना की जाए कि यदि इतना भी बचा पाना संभव नहीं हुआ, तो.....? तो ऐसे में मुझे 19 वीं सदी के महानतम दार्शनिकों में गिने जाने वाले जर्मन दार्शनिक व लेखक Arthur Schopenhaur (1788-1860) याद आते हैं, जिन्होंने लिखा था कि यदि समूचा विश्व नष्ट हो जाए तो मात्र ईशोपनिषद् (यजुर्वेद का चालीसवाँ अध्याय) बचा लिए जाने से समूची मानवता बची रह जाएगी क्योंकि उतने में भी समूची मानवता के लिए समस्त अथाह ज्ञान समाहित है। ध्यातव्य है कि ईशोपनिषद् में कुल जमा केवल 18 मंत्र हैं, जो मात्र एक ही पृष्ठ पर दोनों ओर में आ जाते हैं।

यह ज्ञान वह धरोहर है, जो मानवजीवन की उत्कृष्टता, सात्विकता व परिमार्जन का आधार है। ऋषियों ने मनुष्य के जीवन को उसके मूलरूप में इतनी गहराई से समझा–समझाया है कि उतना वैज्ञानिक, तार्किक व स्वत:सम्पूर्ण चिंतन अन्यत्र दुर्लभ तो क्या है, है ही नहीं। जीवन व जगत् के विषय में जो तथ्य और निष्कर्ष भारतीय आर्ष वाङ्मय परम्परा में उपलब्ध होते हैं, आज तक का विज्ञान एक–एक कर उन्हें प्रमाणित सिद्ध होता देख चकित रह जाता है। विशिष्ट बात यह है कि यह समूचा ज्ञान सार्वभौमिक है, मनुष्यमात्र के लिए। जीवन, मनुष्य व जगत् को उसके सही रूप में जानने के कारण उन्होंने इसे सुखमय, सात्विक, श्रेष्ठ, उत्कृष्ट एवं परिमार्जित करने–कराने की विधियाँ भी सूत्रबद्ध कर दीं। देखने में एकबार तो ऐसा प्रतीत हो सकता है कि ये विचार व सुझाव केवल चिन्तन–मनन का विषय हैं, किन्तु ऐसा है नहीं क्योंकि इनका धरातल पूर्णत: व्यावहारिक जीवन है।

Vedic philosophers took a very Comprehensiv and holistic approach yet that is so simple and nature. (Harish Chandra, The Inward Journey/Enriching The Life/ Page 79)

यह मानवी सत्ता जगत् में रहते, गति व संचालन करते हुए अबाध रूप में कैसे स्वयं से, संसार से, समाज से पंचतत्त्वों व परिवेश से किस प्रकार तादात्म्यपूर्वक समन्वय स्थापित करते हुए उत्तरोत्तर अधिक क्षमतापूर्ण, ज्ञान– विज्ञान सम्पन्न, भावप्रवण, स्व–स्थ, शुद्ध, सुखी एवं प्रसन्न रहे। यह प्रश्न मानवी सृष्टि के आदि से सुलझाया जाता रहा है। इस क्रम में अध्यात्म, समाज, धर्म, दर्शन, मनोशास्त्र व साहित्य ने निरन्तर मीमांसा करते हुए जीवन को प्रकृष्टतर बनाने वाले ऊर्ध्वमुखी तत्त्व व व्यवहार अपनाने पर बल दिया। सभ्यता के आदिकाल में ही भारतभूमि ने इस दिशा में अत्यन्त सफलता प्राप्त कर ली, जिसे भारतीयभूमि व समाज की उपलब्धि माना गया। विविध क्षेत्रों की इसी प्रकार की उपलब्धियाँ मिलकर देश की संस्कृति के रूप में रुपायित हुईं। निर्विवाद रूप से संस्कृति तात्विक दर्शन को जीवन के धरातल पर व्यावहारिक रूप से अपनाने वाली सभ्यता की उपलब्धियाँ का ही दूसरा नाम है। मनुष्य जीवन को निखारने–सँवारने वाले सभी आदर्श व व्यवहार इसमें सम्मिलित हैं। वाङ्मय मानवता को संस्कृति को दीक्षा देता है और संस्कृति मनुष्य का मूल्यबोध बनाए व बचाए रहती है। इसलिए मेरी रुचि इसी के आधार को बचाए रखने में है।

इस काल्पनिक उड़ान पर जाने से चिंतित होने वालों के लिए यह जानना अनिवार्य है कि वैदिक गणना के अनुसार अभी सृष्टि के नष्ट होने में 2.36 अरब वर्ष का समय शेष है। इसलिए बचाए रखने की यह कल्पना हमें इस सृष्टि के रहते हुए भी सर्वदा बचाए जाने वाले घटकों के रूप में स्मरण रखनी है। अन्यथा प्रलय आने से भले ही सृष्टि नष्ट भी नहीं होने वाली किन्तु भोग व स्वार्थ की संस्कृति मानवता का समूचा संहार कर देगी तो क्या यह धरती मनुष्य के रहने योग्य बचेगी? उस स्थिति की कल्पना भी नहीं अच्छी। इसलिए मैं तो इस पूरी स्थिति पर अथर्ववेद के मंत्र से बढ़कर सटीक कुछ नहीं समझती।

अन्ति सन्तम् न जहाति, अन्ति सन्तम् न पश्यति। देवस्य पश्य काव्यम्, न ममार न जीर्यति।

- kavita.vachaknavee@gmail.com

वेदों का त्रैतवाद : वैदिक दर्शन का मूल प्रतिपाद्य विषय

गतांक से आगे –

ओ३म् विश्वानि देव सवितुर्दुरितानि परा सुव। यद् भद्रं तन्न आ सुव।
यजुर्वेद 30/3

अर्थात्– हे सकल जगत् के उत्पत्तिकर्ता, समग्र ऐश्वर्ययुक्त, शुद्ध स्वरूप, सब सुखों के दाता परमेश्वर। आप कृपा करके हमारे सम्पूर्ण दुर्गुण,दुर्व्यसन तथा दु:खों को दूर कीजिए और कल्याण कारक गुण, कर्म, स्वभाव एवं पदार्थ हैं वे सब हमको प्राप्त कराइए।

ओ३म् अग्ने नय सुपथा राये अस्मान विश्वानि देव वायुनानि विद्वान।

अर्थात् – हे सुख के दाता, स्व प्रकाश स्वरूप, सबको जानने हारे परमात्मन। आप हमको श्रेष्ठमार्ग से सम्पूर्ण प्रज्ञानों को प्राप्त कराइए और जो हममें कुटिल पापाचरण मार्ग है, उससे पृथक कीजिए। इसलिए हम लोग नम्रतापूर्वक आपकी बहुत सी स्तुति करते हैं कि आप हम को पवित्र करें।

प्रकृति : सत्वरजस्तमसां साम्यावस्था प्रकृति:। प्रकृते र्महान् महतोऽहकाडा कत पचतन्मा त्राण्युभर्यामिन्द्रियं पच तन्मात्रेभ्य: स्थूलभूताति पुरुष इति पच्चविंशतिगर्ण। (सांख्य सूत्र)

अर्थात्– सत्, रज, तम (शुद्ध, मध्य, जड़ता) तीन तत्व मिलकर जो एक संघात हैं, उसका नाम प्रकृति है उसमें पंचभूत, दस इन्द्रियाँ मन तथा महतत्व बुद्धि है।

प्रख्यात पाश्चात्य वैज्ञानिक विलियम सैसिल डैम्पियर वीनम ने अपनी पुस्तक "History of science and its Relation with philosophy and religion" में प्रकृति के बारे में लिखा है, मैटर को द्रव्य मानकर उसको परमाणु और अणु में विभाजित समझा गया था और फिर परमाणुओं के भाग किए गए, जिन को हम प्रोटोन और इलैक्ट्रोन के नाम से जानते हैं। अब इनके भी भाग किए गए हैं जिनको रेडियेशन का स्त्रोत या तंरग रूप में कह सकते हैं, जिन के सम्बंध में केवल यह कहा जा सकता है कि ये आकस्मिक घटनाएँ हैं, जो किसी निश्चित केन्द्र से उत्पन्न होती हैं।

प्रकृति के परमाणु स्वरूप धारण करते रहते हैं और उनको स्वरूप धारण करने से उत्पति वृद्धि और नाश की स्थिति होती है। इस तीन प्रकार के चक्र में इस जगत् का चक्र चल रहा है।

जगत् की उत्पत्ति से पूर्व ही परमेश्वर, प्रकृति,काल,आकाश तथा जीवों के अनादि होने से जगत् की उत्पत्ति होती है। यह जगत् निमित्त कारण परमात्मा से उत्पन्न हुआ है। किन्तु इसका उपादान कारण प्रकृति है। ईश्वर सृष्टिकर्त्ता है। सृष्टि उसको कहते हैं, जो पृथक दृव्यों को ज्ञान का युक्तिपूर्वक मेल–होकर नाना रूप बनता है। सृष्टि के पूर्व प्रलय के बाद सृष्टि – यह चक्र अनादि काल से चला आता है। इसका आदि और अंत नहीं है किन्तु यह प्रवाह से अनादि है अर्थात् जगत की उत्पति,स्थिति और प्रलय प्रवाह से अनादि है। जैसे रात के बाद दिन तथा दिन के बाद रात का प्रवाह चलता रहता है।

सृष्टि की आयु – वैदिक परंपरा के अनुसार एक अरब सत्तानवे करोड़ उनतीस लाख उनचास हजार एक सौ ग्यारह वर्ष पूर्व वर्तमान सृष्टि की उत्पत्ति हुई ।

– गौरी शंकर भारद्वाज
पूर्व विधायक

पृष्ठ 3 का शेष

प्रकृति हमसे क्या कहती है? : एक वैज्ञानिक और .....

नहीं सकता, सुख से तो कदापि नहीं। अन्न, जल, वायु तो मानव निर्मित नहीं हैं। प्रकृति ने अन्न दिया तो साथ में भूख भी दी,जल दिया तो प्यास भी दी। वायु दिया तो श्वास–उच्छवास की शक्ति भी दी। अस्तु! पहले अन्न या पहले भूख? पहले जल या पहले प्यास पहले? पहले वायु या पहले श्वास? इस पर विचार करना आवश्यक है।

शरीर के साथ–साथ विविध अवयव(इन्द्रियाँ) भी हैं। इन अवयवों में आँख, कान, नाक, जीभ और त्वचा ये ज्ञानेन्द्रियाँ दीं। इनमें से हरेक के विषय भिन्न–भिन्न हैं। रूप या दृश्य आँखों का, ध्वनि या शब्द कानों का, गन्ध नाक का, रस या स्वाद जीभ का और स्पर्श त्वचा का विषय है। फिर पहले विषय या पहले अवयव? इनमें निश्चय ही विषय पहले से है। किन्तु इन्द्रियों के लिए क्या मानवों ने रेली (मोर्चा) निकाली थी? इन्द्रियों के बिना मानव जी नहीं सकता और इन्द्रियाँ तथा उनके विषयों का निर्माण मानव नहीं कर सकता। माता के पेट में गर्भ (भ्रूण) बढ़ता जाता है स्तनों में दूध का निर्माण होने की प्रक्रिया प्रारम्भ होती है। गाय को बछड़े को जन्म देने से पहले ही दूश स्तनों में उतर जाता है। तब किसान या गोपाल समझ जाता है कि बछड़ा जन्म लेगा। देखिए! पैदा हुआ बच्चा या बछड़ा बाहर का अन्न ग्रहण नहीं कर सकता। अत: हठात् माँ के स्तनों में दूध रूपी अन्न तैयार होता है। क्या इस दूध का निर्माण माँ ने किया है? या पिता ने? सरकार ने? या वैज्ञानिक ने? यह काम कोई भी नहीं कर सकता। शिशु जब पेट में रहता है, तब उसकी श्वास बन्द रहती है, किन्तु जैसे ही माँ के पेट से बाहर आ जाता है तो श्वास अपने–आप आरम्भ हो जाती है। अत: जल, वायु, अन्न पहले से ही विद्यमान होता है। यह सिद्ध हो जाता है। खाये हुए अन्न का रस में परिवर्तन कैसे होता है? यह हमें ज्ञात नहीं है। इसी रस से रक्त,मांस,मेद,मज्जा,अस्थि,वीर्य इन सप्त धातुओं के बिना मानव को जीना सम्भव नहीं हो सकता और सुखी होना भी नहीं। शरीर की उत्पत्ति ,वृद्धि एवं नियमन हमारे हाथ में नहीं है। शरीर बाजार में खरीद कर नहीं मिलता। बचपन,जवानी एवं बुढापे को हम टाल नहीं सकते, बदल तक नहीं सकते। यह क्रम अग्र दिशा (Forward direction) में है। हम उसे पश्च Reverse कर नहीं सकते। मैं इस समय पैंसठ (65) वर्ष का हूँ। अब मुझे पुन: पाँच (5) या दस (10) वर्ष का बालक बनना नहीं आयेगा। फिर ये ऐसा क्यों? कितना बड़ा आश्चर्य है? देखिए। हम एक बाल (केश) का भी निर्माण नहीं कर सकते।

शरीर में अनेक अवयव और यन्त्र बिछाये गये हैं। वैज्ञानिकों को केवल दृश्य अवयव ही पता हैं। अदृश्य अंगों की वैज्ञानिकों को जानकारी तक नहीं है। विज्ञान के द्वारा जितने भी यन्त्र बनाये गये हैं, बन रहे और भविष्य में बनाये जायेंगे वे सभी मानव–शरीर में दृश्य और अदृश्य रूप में पहले से ही विद्यमान हैं। आज हमारे पास टी.वी. रेडियो, केल्क्यूलेटर, कम्प्युटर, वि.डी.ओ. सब कुछ है, किन्तु उनका निर्माण करने वाले नहीं हैं। फिर ये सब अन्य लोगों को और गरीबों को बिना धन खर्च किए प्राप्त कैसे हुए? क्या यह सब अपने–आप हो जाता है?

शरीर की त्वचा फट जाने पर उसे जोड़ने की शक्ति किसने निर्माण की? हमने?डॉक्टरों ने? वैज्ञानिकों ने? सरकार ने या अपने–आप? यह शक्ति न होती तो क्या डॉक्टर शल्यक्रिया कर सकते थे? हड्डी टूट जाने पर पुन: जुड़ जाने की क्षमता का निर्माण किसने किया? अगर यह क्षमता न होती तो हड्डी के डॉक्टर क्या करते? मल–विसर्जन, श्वास–प्रश्वास आदि आवश्यक क्रियाएँ बन्द होने पर मानव की मृत्यु हो जाती है। अर्थात् जिन चीजों को हम लेते हैं उन्हें वापस कर देना भी उतना ही आवश्यक होता है। यदि हम वापस न देंगे तो हमें जीने का कोई अधिकार नहीं है। यह नियम किसका है? लेना है तो देना भी है। मानव के हाथों में न उसका जन्म है और न मृत्यु ही है। विश्व में कोई भी मरना नहीं चाहता। निराशा या विफलता से मरना पृथक्। किन्तु गरीब–अमीर, बालक–वृद्ध, चिकित्सक–वैज्ञानिक, राजा–प्रजा,सभी को एक न एक दिन मर जाना ही है। यह कितनी विचित्र बात है? जन्म भी हमारे हाथ में नहीं है।

किन्तु परिवार–नियोजन की शल्य क्रिया को लोग अपने हाथ की चीज समझते हैं। 'टेस्ट–ट्यूब बेबी' का निर्माण अपने हाथों में मानते हैं। यह गलत है। वीर्य अर्थात् शुक्राणु (और रज अर्थात् बीजोड (Ovnum) का निर्माण मानव नहीं कर सकता। यदि ऐसा होता तो चिकित्सक और नि:सन्तान लोग ही नहीं रहते।

पेड़–पौधों (वनस्पतियों) का निरीक्षण

पेड़–पौधों की ओर देखने से उनका भी जीवन–चक्र चलते हुए दिखाई देता है। बीजारोपण,अंकुरण,पौधा बनना,वृक्ष बनाना, वह पेड़ पुष्पित फलित होना और अन्त में बीज निर्मिति। इस पूरी प्रक्रिया में एक भी गलती हुई तो पूरा जीवन–चक्र ही ठप्प हो जाता है। जड़, तना, पत्ते, फूल, फल आदि सब की रचना क्या कहती है? कितने ही भिन्न–भिन्न पत्ते, रंग–बिरंगे फूल, उनका सुगन्ध, पत्थरों को भी भेदने की कोमल पेड़ की क्षमता, उनमें भी विविध अंगों में समन्वय है। वे सारे अंग भिन्न–भिन्न होते हुए भी समरस होकर कार्य करते हैं। जिस प्रकार श्रम–विभाजन उसी प्रकार उन–उन अंगों की संरचना, क्षमता और योग्यता है। यह सब कुछ देखने पर एक महान् आश्चर्य ही दिखाई देगा। पेड़–पौधे जड़ पदार्थों का शोषण करते हैं और उन पदार्थों का रूपातन्रण अन्य–पदार्थों में करते हैं। सूर्य, जल, वायु, कार्बन डाईऑक्साइड आदि का निर्माण तो पेड़–पौधों ने नहीं किया। डनके बिना वनस्पतियों का निर्वाह नहीं हो सकता। फिर ये सब अपने–आप कैसे होता है? इनमें से किसी पदार्थ का निर्माण सरकार या वैज्ञानिक या फिर कोई पशु, वनस्पति या मानव भी इन पदर्थों का निर्माण नहीं कर सकते हैं या यह प्रक्रिया भी चला सकते।

वनस्पतियों का प्रजोत्पादन भी एक आश्चर्यजनक घटना है। फूलों में एक ओर नर Pollen grain तैयार होते हैं तो दूसरी ओर मादा Oveles का निर्माण होता है। इन दोनों का Maturation period कौन निश्चित करता है? Stigma की ग्रहण क्षमता एवं Pollen grain बाहर आने का समय आदि की समय–सारणी कौन बनाता है। जिन वनस्पतियों में समलिंगी फूल होते हैं उनमें यह प्रक्रिया और भी विस्मयजनक है। दो भिन्न–भिन्न पौधे एक जगह बढ़ते हैं, एक नर और दूसरा मादा। मादा पौधे के फूल खिलते हैंऔर यह अवस्था ग्रहण क्षमता की द्योतक है। ठीक इसी समय नर पौधे के फूलों से Pollen grain बाहर निकलते हैं। इतना ही नहीं तो इन Pollen grain का वहन करने के लिए जल,वायु, जन्तु या अन्य किसी पशु का उपभोग कर लिया जाता है। किस प्रकार का Insect कीटक आयेगा और परागकण pollen grains ले जाएगा यह भी निश्चित होता है और ऐसा प्रत्यक्ष होता भी है।

पानी में रहने वाली वनस्पति vallisneria का उदाहरण लीजिए। इसकी मादा के फूल Mature होते ही पानी के पृष्ठतल पर आकार खिले जाते हैं। पानी के प्रतल पर आने के लिए उसका डण्ठल लम्बा और स्प्रिंग के आकार जैसा होता है। उधर किसी दूसरी ओर नर वनस्पति कहीं दूर बढ़ती रहती है। उस पर नर फूल तैयार होता है। किन्तु इन फूलों को डण्टल नहीं होता। ये फूल पौधे से अलग किये जाते हैं। और पानी के पृष्ठ पर आकर खिलते हैं, pollen grains बाहर फेंकते हैं। ये परागकण पानी से खराब न हो जाएँ इसलिए इनके चारों ओर मोम का कोटिग रहता है। ये परागकण पानी पर तैरते हुए प्रवाह के साथ या लहरों के साथ आते हैं, और मादा Stigm में पराग–सिंचन हो जाता है।

क्या यह सारा कार्यक्रम स्वयं वनस्पतियों ने निर्माण किया है? या सरकार ने? या अपने–आप हुआ है?

पेड़–पौधों के शरीर की सरंचना देखने पर हमें और भी विस्मय होगा। पान का वहन करने वाली नलिकाओं को चौड़ा किया है तो अन्य नलिकाओं को पतला ही रखा है। Xylem में जहां छाल उखाड़ रखी है वहाँ की कोशिकाएँ चौड़ी भित्तिकाओं की बनी हैं, ऐसी कोशिकाएँ Sclere nchyma collenchyma रखी हैं। अन्न का वहन करने वाली pholoen नलिकाएँ पतली रखी हैं। तो वनस्पति के जो अंग बढ़ते रहते हैं, उनकी संरचना और क्षमता भी एकदम अलग है। पर क्या यह सब अपने–आप ही हो जाता है?

इतना ही नहीं तो जड़ों में, तनों में, पत्तों में और फूलों में अलग–अलग प्रकार के रसायन भी होते हैं। छोटी–छोटी वनस्पतियों में उनकी अपनी सुरक्षा–प्रणाली है। मौसम के साथ परिवर्तन करने की उनमें क्षमता है। यह सब कैसे होता है?

वनस्पतियों और पशु–पक्षियों के शरीर जब नष्ट हो जाते हैं तो विखण्डन की स्थिति और प्रकृति के मूल पदार्थ वापस देने की व्यवस्था भी है। यदि ऐसा न हो तो प्रकृति का चक्र ही रुद्ध हो जाता।

लेखक सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, नई दिल्ली के उपप्रधान एवं आर्य प्रतिनिधि सभा महाराष्ट्र के संरक्षक हैं।

निर्वाचन

आर्य समाज मण्डी डबवाली, हरियाणा
प्रधान : श्री सन्तोष कुमार दुआ
मन्त्री : श्री सुदेश आर्य
कोषाध्यक्ष : डॉ. रामफल आर्य

ओ३म्
भारत में फैले सम्प्रदायों की निष्पक्ष व तार्किक समीक्षा के लिए उत्तम कागज़, मनमोहक जिल्द एवं सुन्दर आकर्षक मुद्रण (द्वितीय संस्करण से मिलान कर शुद्ध प्रामाणिक संस्करण)
सत्य के प्रचारार्थ
सत्यार्थ प्रकाश
सत्य के प्रचारार्थ

● प्रचार संस्करण (अजिल्द) 23×36÷16	मुद्रित मूल्य 40 रु.	प्रचारार्थ 25 रु.	प्रचारार्थ मूल्य पर कोई कमीशन नहीं
● विशेष संस्करण (सजिल्द) 23×36÷16	मुद्रित मूल्य 80 रु.	प्रचारार्थ 50 रु.	
● स्थूलाक्षर सजिल्द 20×30÷8	मुद्रित मूल्य 150 रु.		प्रत्येक प्रति पर 20% कमीशन

10 या 10 से अधिक प्रतियाँ लेने पर विशेष अतिरिक्त कमीशन
कृपया, एक बार सेवा का अवसर अवश्य दें और महर्षि दयानन्द की अनुपम कृति **सत्यार्थ प्रकाश** के प्रचार प्रसार में सहभागी बनें
आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट
427, मन्दिर वाली गली, नया बांस, दिल्ली-6
Ph. :011-43781191, 09650622778
E-mail : aspt.india@gmail.com

माता लीलावती आर्यभिक्षु परोपकारिणी न्यास पुरस्कार हेतु प्रस्ताव (आवेदन) आमन्त्रित हैं

प्रत्येक वर्ष की भाँति इस वर्ष भी माता लीलावती आर्यभिक्षु परोपकारिणी न्यास द्वारा दिए आर्य विद्वान और श्रेष्ठ आर्यकर्ता को दिये जाने वाले पुरस्कार के लिए प्रस्ताव आमन्त्रित हैं। उक्त पुरस्कार 31 जनवरी2013 को दिया जाएगा। ज्ञातव्य है पुरस्कार आर्य वानप्रस्थ आश्रम स्थित न्यास द्वारा आयोजिक कार्यक्रम में दिया जाएगा। पुरस्कार में 1000 हजार की राशि दी जाती है। विद्वानों एवं कार्यकर्ताओं के चयन हेतु निम्नलिखित आवेदन आमन्त्रित हैं–

1–स्वामी धर्मानन्द विद्यामार्तण्ड आर्य भिक्षु पुरस्कार(प्रत्येक विद्वान के लिए) 2–ब्र. अखिलानन्द आर्यभिक्षु पुरस्कार(ने.ब्रह्मचारी के लिए)3–स्वामी आत्मबोध सरस्वती कर्मवीर पुरस्कार(श्रेष्ठ आर्य कार्यकर्ता के लिए) प्रथम एवं द्वितीय पुरस्कार सामान्यतः उप विद्वानों, ब्रह्मचारियों को प्रदान किए जाते हैं जिनकी कोई निश्चित आर्य नहीं होती। तृतीय पुरस्कार के लिए कोई शर्त नहीं है।

उपर्युक्त पुरस्कारों के लिए 31 दिसम्बर2012 तक आवेदन प्रधान, मन्त्री, न्यास के नाम से सम्पूर्ण विवरण,यौक्षिक योग्यता, लेखन, प्रचार कार्य, जनहित में योगदान, दो फोटो आदि के साथ अपने दूरभाष एवं पूर्ण पते सहित आवेदन भेजना चाहिए।

– देवराज आर्य, मन्त्री(09997070789)
माता लीलावती आर्य भिक्षु परोपकारिणी न्यास,
आर्य वानप्रस्थ आश्रम, ज्वालापुर, हरिद्वार (उत्तराखण्ड)

महाकुम्भ–प्रयाग में वैदिक धर्म प्रचार शिविर

साहित्य, धर्म व संस्कृति की त्रिवेणी कहे जाने वाले तीर्थराज प्रयाग में लगने वाले महाकुम्भ2013 के शुभ अवसर पर आर्य उपप्रतिनिधि सभा प्रयाग के तत्वावधान में वैदिक धर्म के प्रचार–प्रसार हेतु शिविर का आयोजन किया जा रहा है। जो आर्यजन महाकुम्भ मेले में भ्रमरार्थ जाना चाहते हैं वे प्रचार शिविर के स्थान महाकुम्भ मेले के सेक्टर संख्या.9, ब्लाक संख्या 66, पश्चिम पटरी, मुक्तिमार्ग पर पहुँचकर लाभ अर्जन कर सकते हैं। पहुँचने के पूर्व पंजीकरण कराना अनिवार्य है। मेले की तिथि 13 जनवरी से 25 फरवरी 2013 है। इसके लिए सम्पर्क करें–

आर्य राजेन्द्र कपूर, मन्त्री, आर्य समाज मुण्डेरा बाजार, इलाहाबाद–211011, चलभाष : 09889482489

आर्यजन आर्य महासम्मेलन के सन्दर्भ में अपने अनुभव एवं सुझाव भेजें

रोहिणी दिल्ली में 25 से 28 अक्टूबर 2012 में आयोजित अन्तरराष्ट्रीय आर्य महासम्मेलन शूमशाम के साथ सम्पन्न हो गया। इस ऐतिहासिक सम्मेलन के प्रत्येक आर्य महानुभाव के अपने अनुभव हैं। इसी प्रकार इस सम्मेलन को लेकर अनेक जिज्ञासाएँ होंगी। आप के मन में अनेक सुझाव होंगे। इन सभी को समेटते हुए आर्यजन सम्मेलन के विषय में अपने अनुभव और सुझाव भेजें। इससे सम्मेलन के संयोजकों को जहाँ आगे के सम्मेलनों के लिए प्रेरणा मिलेगी वहीं पर ऐसे सम्मेलन का एक इतिहास भी आप के अनुभवों से निर्मित हो सकता है।

–संयोजक, महासम्मेलन

आपकी प्रतिक्रिया **अन्तरराष्ट्रीय आर्य महासम्मेलन : जैसा मैंने देखा**

भव्यतम और दिव्यतम था आर्य महासम्मेलन

संयोजक, आर्य महासम्मेलन,2012
महोदय,

25 अक्टूबर से 28 अक्टूबर तक दिल्ली में आयोजित अन्तरराष्ट्रीय आर्य महासम्मेलन में जिस विशालतम् और भव्यतम् कार्यक्रम की संयोजना आपने अपने कुशल नेतृत्व व प्रखर व्यक्तित्व के द्वारा भव्यतम व दिव्यतम रूप में संयोजित किया गया वह आप के नेतृत्व का कीर्तिमान प्रस्तुत किया है, इसके लिए आप` कोटिशः बधाई के पात्र हैं। यद्यपि इस महती सफलता की महती पृष्ठभूमि में आप के साथ आपकी सम्पूर्ण आर्य शक्ति वन्दनीय व अभिनन्दनीय है।

वहां से लौटकर आने के पश्चात् व्यस्तता के कारण यह ह्रदय का उदगाार तबसे लेकर अब लेखनीबद्ध होकर आपको सादर समर्पित कर रहा हूँ। आप का–

आचार्य कृष्ण मुरारी आर्य (अधिवक्ता),खेतासराय, जौनपुर (उ.प्र.)

सेवक की आवश्यकता

आर्य समाज बी.एन. पूर्वी शालीमार बाग, दिल्ली–88 के लिए एक सेवक की अविलम्ब आवश्यकता है। अभ्यर्थी को हिन्दी एवं अग्रेजी का सामान्य ज्ञान होना आवश्यक है। योग्यतानुसार वेतन, आवास की सुविधा निःशुल्क। सम्पर्क करें– **प्रधान, आर्य समाज, बी.एन. पूर्वी शालीमार बाग, दिल्ली–88**
दूरभाष : 011–27473462

आर्य डॉ. ओमप्रकाश भटनागर के 85वें जन्म दिवस पर हवन सामग्री सप्रेम भेंट

आर्य सन्देश के सह व्यवस्थापक डॉ. ओमप्रकाश भटनागर के 85वें जन्मदिवस पर (5 जनवरी 2013) दिल्ली की समस्त आर्य समाजों, गुरुकुलों एवं अनाथालयों के लिए, जिनमें दैनिक यज्ञ होता हो, उन्हें 5 किलो हवन सामग्री निःशुल्क 5–14 जनवरी 2013 तक वितरित करने का संकल्प लिया है।

इस अवसर पर लाभ उठाने हेतु संस्थाएँ अपने प्रधान/मन्त्री से हस्ताक्षरित पत्र देकर एवं अपनी संस्था के स्टाक रजिस्टर में लिखाकर दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा 15 हनुमान रोड से प्राप्त कर सकते हैं। **–सम्पादक**

वैवाहिक विज्ञापन – विशेष–सूचना

महर्षि दयानन्द जी की यह ढ़ृढ़ मान्यता है कि विवाह हमेशा सदृश अर्थात् परस्पर समान गुण, कर्म, स्वभाव वालों का ही होना चाहिए। क्योंकि ऐसे विवाह से ही कुल में प्रसन्नता रहती है और उसी कुल में आनन्द, लक्ष्मी और कीर्ति निवास करती है।

आज हमारे पारिवारिक अशान्ति, कलह, दुःख और वैमनस्य का मूल कारण महर्षि के इस वचन का पालन न करना ही है। महर्षि ने तो मनु के प्रमाण से बलपूर्वक यहाँ तक कह दिया कि "चाहे लड़का–लड़की मरणपर्यन्त कुमार (अविवाहित) रहें परन्तु असदृश अर्थात् परस्पर विरुद्ध गुण, कर्म, स्वभाववालों का विवाह कभी न होना चाहिए।"

अतः सुख, शान्ति प्रसन्नता और आनन्द चाहने वालों का परम कर्तव्य है कि वे ऋषियों के निर्देश का पालन करते हुए गुण, कर्म, स्वभाव के अनुसार परस्पर विवाह रचायें।

इशर काफी दिनों से देश विदेश के कतिपय आर्य परिवारों की यह मांग रही है कि आर्य संदेश में वैवाहिक विज्ञापन का स्थायी स्तंभ प्रारंभ किया जाये, जिससे कि आर्य परिवारों को श्रेष्ठ, सुशील, निर्व्यसनी शाकाहारी, शार्मिक वर अथवा वशू के चयन में अत्यन्त सुगमता हो। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए अब 'आर्य सन्देश' में वैवाहिक विज्ञापन सेवा प्रारंभ की जा रही है। सभी आर्य जनों से निवेदन है कि इस सेवा का लाभ उठाकर अपने सुखमय परिवार की आशार शिला बनावें।

श्यान दें:– 'आर्य सन्देश' में अपने वैवाहिक विज्ञापन प्रकाशित करने के लिए विज्ञापन में 'जाति बन्शन नहीं', और 'आर्य वर/आर्य कन्या की आवश्यकता है' ऐसा देना अनिवार्य है। एक अंक के लिए निर्शारित विज्ञापन शुल्क 150/–, दो अंक के लिए 200 तथा लगतार तीन अंकों के लिए 300/– रुपये देय होगा।

– सम्पादक

आर्य सन्देश के वार्षिक सदस्यों की सेवा में

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के मुखपत्र **साप्ताहिक "आर्यसन्देश"** के समस्त वार्षिक सदस्यों ने निवेदन है कि अपना वार्षिक शुल्क यथाशीघ्र सभा कार्यालय को भेज दें, जिससे कि उन्हें नियमित रूप से आर्यसन्देश भेजा जाता रहे। जिन सदस्यों के शुल्क तीन वर्षों से अशिक बकाया हों उनसे निवेदन है कि वे अपना आजीवन शुल्क भेजें। इस कार्य का यथाशीघ्र प्राथमिकता से करें अन्यथा **इस मास से आर्यसन्देश भेजना बन्द कर दिया जाएगा। वार्षिक शुल्क 250/– रुपये** तथा **आजीवन शुल्क 1000/– रुपये** है। पत्र व्यवहार के लिए सदस्य संख्या तथा पिनकोड अवश्य लिखें। ***– सम्पादक***

अन्तरराष्ट्रीय आर्य महासम्मेलन सी डी उपलब्ध

5 सी डी सेट मात्र 150 रुपये

(डाक व्यय अलग देय होगा)

25, 26, 27, 28+कवि सम्मेलन
आर्य वीर दल व्यायाम प्रदर्शन एवं लेजर शो

पैसा भेजने पर ही सीडी भेजी जा सकेगी अथवा कार्यालय से प्राप्त की जा सकती है।

–: प्राप्त स्थान :–

वैदिक प्रकाशन विभाग, दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा,
15-हनुमान रोड, नई दिल्ली फोन: 011-23360150,23365959

साप्ताहिक आर्य सन्देश

24 दिसम्बर से 30 दिसम्बर , 2012

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा, 15–हनुमान् रोड, नई दिल्ली–110001

दिल्ली पोस्टल रजि.नं0 डी.एल.(एन.डी.)–11/6071/2012–13–14

नई दिल्ली पी.एस.ओ. में पोस्ट करने का दिनांक 27 / 28 दिसम्बर –2012

पूर्व भुगतान किए बिना भेजने का लाइसेन्स नं0 यू0(सी0) 139/2012–14

आर. एन. नं. 32387/77 प्रकाशन तिथि: बुधवार 26 दिसम्बर, 2012

आर्यजनों के लिए खुशखबरी-साहित्य पढ़ें सीडी से

महर्षि दयानन्दकृत सम्पूर्ण साहित्य एवं सत्यार्थ प्रकाश (18 भाषाओं में)

सीडी में उपलब्ध मूल्य मात्र 30/-रु.

प्रतिष्ठा में,

श्री.....

अन्तर्राष्ट्रीय आर्य महासम्मेलन-2012 के कूपनों पर एकत्र की गई राशि शीघ्र भेजें

अन्तर्राष्ट्रीय आर्य महासम्मेलन के विशाल कार्य पर बहुत अधिक व्यय हुआ है। सभी दान दाताओं एवं दान एकत्र करने वालों से निवेदन है कि वे अपनी राशि तथा कूपनों पर एकत्र की गई राशियाँ कूपन सहित शीघ्रताशीघ्र सभा कार्यालय में भेजें। जो सज्जन महासम्मेलन में अपनी आहुति अभी तक न दे पाए हों उनसे भी निवेदन है कि वे भी अपनी आहुति अवश्य ही भेजें, ताकि महासम्मेलन के कार्यों के बिल भुगतानों में किसी भी प्रकार की असुविधा न हो। – ***ब्र0 राजसिंह आर्य, संयोजक***

नेमस्लिप्स

विद्यालयों में पढ़ने वाले बच्चों को महर्षि दयानन्द जी के बारे में जानकारी देने तथा उन्हें आर्यसमाज की ओर आकर्षित करने की छोटी सी शुरुआत : कापी–किताबों पर चिपकाने के लिए नेमस्लिप्स। 21 स्लिप्स का एक सैट मात्र 10/– रुपये प्रति शीट।

शगुन लिफाफे

महर्षि दयानन्द के चित्र एवं वेदमन्त्रों सहित छह सुन्दर डिजाइनों में

सिक्के वाले	बिना सिक्के
मात्र 500/-रु. सैकड़ा	मात्र 300/-रु. सैकड़ा

ब्रेल लिपि में महर्षि दयानन्द जीवनी

मात्र1000/- रु

आर्यजन अपनी आर्य समाज की ओर से अंध विद्यालयों को भेंट दें।

प्राप्ति हेतु संपर्क करें।

–: प्राप्त स्थान : –

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा

15 हनुमान रोड,नई दिल्ली

सम्पादक, मुद्रक एवं प्रकाशक ब्र0 राजसिंह आर्य ने दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के लिए सार्वदेशिक प्रेस, 1488 पटौदी हाऊस, दरियागंज, नई दिल्ली–2 से छपवाकर दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा, 15–हनुमान रोड, नई दिल्ली–1; फोन : 23360150; टैलीफैक्स 23365959; E-mail : aryasabha@yahoo.com से प्रकाशित किया।

सम्पादक : ब्र0 राजसिंह आर्य सह सम्पादक : विनय आर्य व्यवस्थापक : सुशील महाजन सह व्यवस्थापक : आर्य डॉ0 ओमप्रकाश भटनागर